उत्तराखण्ड के लोक संगीत में प्रयुक्त मुख्य लोकवाद्य ढ़ोल पर बजने वाली तालों का परिचय

लोक जीवन में गीत–संगीत हृदय की धड़कनों की भाँति समाया हुआ है। हिमालय में बसे उत्तराखण्ड में भी यही गीत–संगीत उन्मुक्त होकर गूंजता है। इसलिए यहाँ गीत–संगीत की समृद्ध परम्परा है जो देव अनुष्ठानों, घडियालों, विवाहोत्सव, नृत्य, वनों, खेतों, पहाडों, नदियों, झरनों आदि में व्यापक रूप से देखने को मिलती है। अनेकों ऋषि मुनियों एवं साधु सन्तों की जन्मभूमि व तपोभूमि होने के कारण से 'उत्तराखण्ड' को 'देवभूमि' कहा जाता है। देवभूमि में सैकड़ों देवी–देवताओं के प्राचीन मन्दिरों व देवस्थानों में समय–समय पर वर्ष भर मेलों–त्यौहारों व उत्सवों का आयोजन होता है तथा इन अवसरों पर प्राचीन लोक संगीत (गायन, वादन, नृत्य) की प्रस्तुति दी जाती है। किसी भी प्रान्त के लोक संगीत की परिकल्पना लोक वाद्यों के बिना नहीं की जा सकती क्योंकि लोक संगीत में ताल वाद्यों का प्रयोग अपेक्षाकृत लोकगीत व लोकनृत्य से अधिक होता है – ''लोक जीवन में वाद्यों के दो स्वरूप मिलते हैं –

(1.) "क्रिया वाद्य यानि विभिन्न क्रियाएं ही वाद्य का रूप धारण कर लेती है। (2.) वस्तु–वाद्य जैसे ढ़ोल आदि। लोक जीवन में हर स्थान पर वाद्य विद्यमान रहते हैं। चक्की की घरघराहट कपड़े धोने की फटफटाहट, बैलों की घंटी के साथ ही लोक गायक का स्वर मिल जाता है। कुछ नहीं तो बर्तन में ही ताल शुरू हो जाता है। बालक आम की गुठली को घिसकर व ज्वार के पत्तों को मोड़कर अपना बाजा तैयार कर लेते हैं। शंख, घड़ियाल, मंजीरा ये सभी लोकप्रिय वाद्य है।'' प्रत्येक प्रांत का एक प्रमुख लोक वाद्य होता है जिस के काराण उस प्रदेश की विशिष्ट पहचान होती है, इसी प्रकार मुख्यतः ढ़ोल दमाऊँ के बिना भी उत्तराखण्ड का लोक संगीत फीका अथवा नीरस प्रतीत होता है क्योंकि उत्तराखण्ड के लोक गीत, लोकनृत्य व लोक वादन में ढ़ोल–दमाऊँ का स्थान सर्वोपरि है। डॉ. लाल मणि मिश्र ने लिखा है कि ''लोक गीतों के संगीत में स्वर वाद्यों का प्रयोग सुख–दुख, हर्ष–शोक के क्षणों में सामान्य रूप से होता है। किन्तु ताल वाद्यों का प्रयोग प्रायः हर्षोल्लास के लिए होता है।'' 2 उत्तराखण्ड का प्रमुख ताल वाद्य 'ढोल' पारम्परिक लोक वाद्य है। 'ढोल–दमाऊँ' बजाने वाले कलाकारों (औजी अर्थात् आवजी) द्वारा इस परम्परागत वाद्य का वादन किया जाता है, ये कलाकार मौखिक कला का निर्वहन करते हुए अपनी ढ़ोल वादन की कला को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सुरक्षित स्थानान्तरित करते हैं, अर्थात् यह कलाकार अपने बड़े–बुजुर्ग लोगों का वादन देखकर या सुनकर पीढ़ी–दर–पीढ़ी निपुणता हासिल करते हैं। इन वादक कलाकारों के वादन के बिना उत्तराखण्ड के गाँवों में आज भी शादी–विवाहोत्सव, देवोपासना, जागर, देवयात्रा आदि कार्य सम्पन्न व शुभ नहीं माने जाते।'' 'ढोल सागर' में 'औजी' को विभिन्न देवी–देवताओं से सीधा सम्पर्क करते दर्शाते हुए उसे एक सिद्ध व्यक्ति निरूपित किया गया है। वह मात्र वादक ही नहीं, एक साधक और आध्यात्मिक–धार्मिक व्यक्तित्व भी है।'' 3 ''ढोल सागर' भगवान शंकर एवं उनकी महाशक्ति देवी पार्वती के आपसी संवाद के रूप में, उनके मुँह से निकले ढोल सम्बन्धी विषय एवं ज्ञान का ग्रन्थ है जिसमें ढ़ोल की उत्पत्ति, उसकी ध्वनि, बनावट, बजाने की विधि, विभिन्न युगों में उसके विभिन्न नाम, उसके अंग एवं उनकी उत्पत्ति, उनके विभिन्न युगों में वादक के साथ–साथ सृष्टि विषयक कई बातों का उल्लेख किया गया है। जिस समय भगवान शंकर एवं देवी पार्वती के बीच में यह ढ़ोल सम्बन्धी संवाद चल रहा था, उस समय वहाँ पर स्त्रोता के रूप में तीसरा व्यक्ति एक आवजी भी था। जिसने इस संवाद को सुना, उसे कंठस्थ किया। उसने और उसके वंशजों ने क्रमशः इस ढ़ोल सागर को श्रुति परम्परा से पीढ़ी दर पीढ़ी वर्तमान में जन मानस तक पहुँचाया।'' उत्तराखण्ड का लोकप्रिय ग्रन्थ 'ढ़ोल सागर' का संग्रह कर सन् 1913 में स्व. ईश्वरी दत्त घिल्डियाल, स्व. पं. गिरिजा दत्त नैथानी जी, तथा पं. भोलादत्त काला जी के प्रोत्साहन पर पहली व अन्तिम बार पं. ब्रह्मानन्द थपलियाल जी ने बदरी केदारेश्वर प्रेस, पौडी से प्रकाशित किया। भगवान शिव के सबसे पहले धारण करने के कारण इसे 'शिवजन्त्री' कहा जाता है तथा ढ़ोल सागर में ढ़ोल को शिव पुत्र कहा गया है। इस ग्रन्थ में चार भाषाओं संस्कृत, हिन्दी, नेपाली और गढ़वाली का प्रयोग हुआ है। ढ़ोल के साथ दमाऊँ (दमौ, दमामा) सहायक–संगतकर्ता वाद्य के रूप में बजाया जाता है। जिस के बिना ढ़ोल के बोलों अथवा ताल की सम्पूर्ण निष्पत्ति नहीं हो पाती। औजी (आवाजी) द्वारा ढ़ोल व दमाऊँ पर बजने वाली मुख्य तालों का उल्लेख निम्न प्रकार से है – ढ़ोल पर बजायी जाने वाली ताल –

1. बढै (बढ़ाई) –

यह ताल प्रत्येक मंगल पर्व, उत्सव के प्रारम्भ में बजायी जाती है, इस ताल की प्रकृति गम्भीर है, बढ़ै के बोल इस प्रकार है –

1	2	3	4	5	6	7	8	
9	10	11	12					
झें	गु	झेगा		झेगु	झेगा			
ता		झें	ता	झे				
13	14	15	16	17	18	19	2	0
21	22	23	24					
गा		ता		झग	नझेगु	झ		

ता ग झे ग ।

25 26 27 28 29 30 31 3 2

झिगतिग झेगु तग झा

इस ताल में 32 मात्राएं 9 विभाग हैं जिसमें कि प्रारम्भिक 7 विभागों में 4–4 मात्राएं व 8 विभाग में 1 मात्रा व 9 वें विभाग में 3 मात्रा आती है।

2. धुँयेल –

यह ताल धार्मिक अनुष्ठानों में देवोपासना के लिए बजायी जाती है। यह ताल मध्य से शुरू होकर द्रुत लय की ओर बढ़ती है, यह रूद्र प्रकृति की ताल है और इसका स्थायी भाव भय है। "लय की दृष्टि से यह ताल दो विभागों में विभक्त होती है, जब लय आरम्भ में द्रुत होने को बढ़ती है जो इसे 'चौरास' कहते हैं तथा लय के प्रति द्रुत हो जाने पर यह 'सुल्तान चौक' कहलाती है, सुल्तान चौक प्रकृति पर पड़ने वाले प्रभाव की दृष्टि से 'भितर चौक' (अन्दर का चौक) और 'भेल चौक' (बाह्य चौक) में विभक्त हो जाता है, इन उप–चौकों को उल्टा चौक और सुल्टा चौक भी कहते है। विश्वास है कि कलावन्तों की पारस्परिक प्रतिस्पर्द्धा के कारण जिस गाँव में भितर चौक बजायी जाती है तो यह गाँव 'भितर चौक' बजाने से समूल विनष्ट हो सकता है तब उस गाँव का महान अनिष्ट से बचाने के लिए प्रतिद्वन्द्वी कलाकार को 'भेल चौक' प्रस्तुत करना अनिवार्य हो जाता है।" धुँयेल ताल 10 मात्राओं की होती है जो झपताल की समदृश प्रतीत होती है। इस के बोल निम्न है –

1 2 3 4 5 6 7 8 9 10

झें गु झे गु तु झे गु त ग तु

3. शब्द –

यह ताल जन साधारण के उल्लास, आलहाद, व प्रसन्नता आदि मनोभावों की अभिव्यक्ति प्रस्तुत करती है। इस ताल के द्वारा चारों ओर के वातावरण में उत्सुकता, प्रसन्नता, खुशी व कौतूहल उत्पन्न होता है। 'शब्द' ताल के तीन भाग होते हैं (क) उठौंण (प्रस्तावना) – जो कि मध्यलय में बजायी जाती है। (ख) बिसौंण (विश्रान्ति) – इस पर जाने के लिए जंक (लय परिवर्तन बोल) के दोनों प्रकार बजाये जाते हैं जो कि धीरे–धीरे द्रुत गति में परिवर्तित होती जाती है। (ग) कांसू (झाला) – जंक का दूसरा प्रकार बजाने के पश्चात् कांसू पकड़ा जाता है – जिसमें कि दमामी (दमाऊँ बजाने वाला) की कला देखते ही बनती है, इस सोपान पर पहुँचकर शब्द की प्रकृति अति चंचल हो जाती है जिसमें कि ढ़ोली व दमामी अपनी कला का सर्वोत्कृष्ट प्रस्तुतीकरण करते है, अंत में छागल (समाप्ति) बजा कर 'शब्द' की समाप्ति की जाती है। शब्द के मौलिक बोलों को प्रस्तुत करने में प्रायः 10 मिनट का समय लगता है जो इस

प्रस्तावना –

झेगु झेगु झेनन झेनन तू . झ ` न न तू झेनन ||

झेनन झेनन झेनन झेनन तू || झ ` न न झेनन झेनन

झेनन तू || झे गु – त ।

||झे ग तुक झेगा

तुक झेगु झेबु तक || झे – तक् तक् झिग टिग तुक।।

झेगन्न झेगा – तक झेगा – । ।

जंक (प्रथम) बिसौण वेद कुरपाण –

त्रिणिता त – – ता – त ।

– –|| ता झेई – ता – – ||

झे तक तक तक झे थक तक त क , तगझे तक तक

झेतु, मेतु, झेतु, || झे तुग त क तक || झे तक् झे तक् । ।

तुगझे तक, तुग झे तक, ता ग त ।

गता ता गता || ताँ गता

तक् तक् झे गन्न् झे गन्न, झ ` गा –, झे गन्न्, झे गा – ||

जंक (द्वितीय) तीन ताल की घोड़ –

झे ग झे ग न्ह – ता – ।

नन्ह ता नन्ह – न्ता, ता –

ता, ता ता – न न्ह

–ता, नन्हन्ता न न्हन्ता ग् । ।

कांसू –

झेगनि, झेगनि, झेग्नि, ता, झे, ग्निता ।

झेगता, गता, झेगता, ग्ता तागता, ग , त । – ।

झेगता गता –, तक झेगु तक त । , नूहता, नन्तन्ता

नहन –, नहन्, नहन्ता न हनु– त । , तागुता झिग टिम्

झेगा – –। तगु झेगु झे ग । –।ता गता तक झेग् झेगा

तक झेग् झेग् तक्, झेग, तक । ।

छागल

झेगनि झेगा –, झे गु तु – क् झे –, झेगक्।

4. जोड़–

यह विलम्बित लय की ताल है। इसमें एक कृति अर्थात् टुकड़ा

बजा कर थोड़े समय के लिए रूक जाते हैं तथा फिर उसी क्रम में कृति–प्रकृतियाँ प्रस्तुत की जाती है। कृतियों कें एक के बाद एक कलात्मक ढंग से प्रस्तुत करने के कारण ही यह जोड़ कहलाती है। इन कृतियों (टुकड़ों) को ढ़ोल की पेशकारें भी कहा जा सकता है। ढ़ोली व दमामी अपनी निपुणता तथा कला कौशलता से ड्योढ़ी अथवा सवाई लय में कृतियों को पेशकर के स्थायी पर आते है। यह सब कलाबाजी के निपुण कलाकार प्रस्तुत कर सकता जिसे लय पर सम्पूर्ण नियन्त्रण हो तथा जिस का आत्मविश्वास अडिग हो जोड़ बजाने के पश्चात् 'शब्द' की प्रस्तुति अनिवार्य होती है, किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि शब्द के प्रारम्भ में जोड़ बजाया जाये, जोड़ की स्थाई तथा कृतियाँ निम्नलिखित है–

स्थाई –

झेई – – – झे – झे ई
– – –, ता – – –ता –,
ता ता, झेई – – –, झिणिता, झे
– – तागता
झेगक, झेई – – । ।

कृति (1)

झेग झेग, झेगझेग ताताग, –, त ा ग झ ` ग
ताताग –

झेता – – – तग्कत्गमक, त क
तक, त्रिणितात्रिणिता, – – ,

ग्ता – ताताग, कग – त ा ग
ताग – ताग, ताता – झेई –
– ।।

कृति (2)

झिग टिग झेगा –। तक तक झे
ता –, झेगत झेगतम
झेगु ताग् झेता –। झेगक, झेगक झे क
झेक – ताग
ता – – – ग,ता – – – ।
ता ता ता–ग् । त्रिणि तक

कृति (3)

झेग झेगा तुक, झेग झेग तुक, ि झ ग ी ट
तक – – –। झिगिटि
झिगिटि, झिगिटि तक – –
– न्हन्– – ता – –, तागता
तागाता,ताता–, नहन – – ता – –
ग्, झे, ग् ता, ग
झेई – – – । ।

5. रहमानी (अभियान)

इस ताल की मुख्य विशेषता यह है कि यह सिर्फ बारात के आने व जाने के समय समय बजायी जाती है। पहाड़ी प्रदेश के धरातल की भाँति अर्थात् चढ़ाई, उतराई, मैदानी, तथा नदी मार्ग के अनुसार ही रहमानी ताल तीन प्रमुख भागों में प्रस्तुत की जाती है। गाँव के लोग रहमानी ताल को सुनकर अदृश्य बारात के बारे में पता कर लेते हैं कि बारात किस समय पर मैदानी, चढ़ाई, उतराई व नदी तट के क्षेत्र पर चल रही है। आज भी उत्तराखण्ड के कई गाँवों में ढोली व दमामी तालों के विशिष्ट बोलों को बजाकर चार–पांच मील दूर से दूसरे गाँव तक अपने गुप्त संवाद व कुछ अन्य सूचनाऐं प्रेरित करते हैं। किन्तु धीरे–धीरे पुरानी पीढ़ी की समाप्ति के साथ ही संवाद प्रेषण की यह प्राचीन परम्परा भी लुप्ति की ओर अग्रसर है। रहमानी के बोल निम्न प्रकार है –

सैन्यवार (सीधा मार्ग) – झेगु तक झेगु झेग तक । झेगन झगत। झे – नन्ह तक
उकाल (चढ़ाई मार्ग) – झेनन तक । झे गा झ नन् तक।।
उन्दार (उतराई मार्ग) – झेगा झे – – । झे नन् तक ।।
गड़–छल (नदी तट) – झेगु झेगु, झग तग्।।

6. नौबत –

रात्रि के द्वितीय व अन्तिम प्रहर में किसी भी शुभ कार्य, उत्सव तथा बसन्त ऋतु में बजायी जाने वाली नौबत ताल अति प्राचीन है। जिसका वर्णन 'ढोल सागर' में उद्दीमदास द्वारा इन्द्र के दरबार में नौबत प्रस्तुत करने के उललेख से प्राप्त होता है। "इसके अन्तर्गत नौ पतन और बाईस पड़तालें प्रस्तुत किये जाते हैं। नौ पतन से, नौ निधियों की तथा बाईस पड़तालों से 8 सिद्धियाँ और 14 भुवनों की अभिव्यक्ति होती है। स्वभावतः इसका मूल भाव शृंगार से अभिभूत शान्त रस है। गढ़वाल–कुमाऊँ में कत्यूरी व अन्य राजाओं के दरबारों में 'नौबतें' बजाने की प्रथा अत्याधिक थी। कत्यूरी राजा मालू–शाही की खैरागढ़ स्थित 'मेलचौंरी' में बिजुला नायक द्वारा नौबत प्रस्तुत करने पर मालूशाही की साली राजकन्या काम–सेना के इस कलाकार की प्रणयिनी बनने की गाथा मालूशाही के गीतों में आज भी गाई जाती है।" 6

7. चारितालिम –

यह रूद्र प्रकृति की अप्रचलित किन्तु महत्वपूर्ण ताल है जो कि शिव ताण्डव तथा 'पांडौ नृत्य' में ही प्रस्तुत की जाती है। चारितालिम के बोल इस प्रकार है –

झेग तु झे झे– ।झे गु तु ग ता – ।।

ढ़ोल के बोल 'ता' व 'दा' के संयोग से 'धा'। तथा 'द' व 'ग' के संयोग से 'झा' बनता है। 'झा' ढ़ोल का गम्भीर बोल माना जाता है, ढ़ोल के साथ 'दमौ (दमाऊँ) वाद्य का वादन अति अनिवार्य होता है इसी के सहयोग से ढ़ोल के बोलों की उत्पत्ति होती है, इनमें से कोई भी वाद्य एकल रूप में नंही बजाया जाता है। अतः दमाऊँ ढोल का मुख्य सहायक वाद्य है। ढोल के प्रमुख चार बोल झा, गा, ता, नन्ह होते हैं तथा दमाऊँ के तीन प्रमुख बोल द, ग, और न निकलते हैं। ढ़ोल तथा दमाऊँ के बोलों के संयोजन से तालों के बोलों की

निष्पत्ति होती है। 'ढ़ोल सागर' की भाँति ही 'दमौ सागर' ग्रन्थ भी उत्तराखण्ड के कलावन्तों को कण्ठस्थ है। दमाऊँ में मुख्यतः 'कांसू' प्रस्तुत किया जाता है जिसके बोल निम्न है –

दिन, गिननि, दि, दिननि, दिन, गिननि, दिन गिनिनि, दिन गिन।

दमाऊँ के ये बोल द्रुत गति से छागल तक पहुँचते हैं तो इन्हें उच्चारित करना सम्भव नहीं होता।

अतः ढ़ोल उत्तराखण्ड के लोकसंगीत में प्रयोग किये जाने वाला प्रमुख लोक वाद्य है। जिसके बिना यहाँ पर देवोपासना, धार्मिक अनुष्ठान, शादी–विवाहोत्सव जन्म से मृत्यु तक के संस्कार, आदि कार्यों की परिकल्पना नहीं की जा सकती।

सन्दर्भ

1. तिवारी, डॉ. ज्योति – कुमाऊँनी लोकगीत तथा संगीत–शास्त्रीय परिवेश, पृ.सं. 31
2. मिश्रा, डॉ. लालमणी – भारतीय संगीत के वाद्य, पृ.सं. 169
3. जोशी, महेश्वर प्रसाद – शूद्रो का ब्राह्मणत्व, पृ.सं. 25
4. पेटशाली, जगुलकिशोर – उत्तरांचल के लोक वाद्य, पृ.सं. 90
5. मैठाणी, डॉ. तुष्टि – भारतीय आध्यात्मिक पृष्ठभूमि में गढ़वाली लोक संगीत, पृ.सं. 390
6. मैठाणी, डॉ. तुष्टि – भारतीय आध्यात्मिक पृष्ठभूमि में गढ़वाली लोक संगीत, पृ.सं. 394

रश्मि डयोंडी
(शोधार्थी संगीत)
वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली राज.

प्रो. किशुंक श्रीवास्तव
(शोध निर्देशिका)
वनस्थली विद्यापीठ, वनस्थली राज.